Intesab Aalami
ISSN: 2348-5035
Vol. 14 / 2026

आधुनिक हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना

श्री धर्मवीर
सहायक प्राध्यापक, भारती संस्कृति एवं भाषा विभाग
चौधरी बंसी लाल विश्वविद्यालय, भिवानी (हरियाणा)
ईमेल पता – dharamviraryavart@gmail.com

भूमिका

आधुनिक हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना समाज की प्राणशक्ति के रूप में उभरी है। जिसने सुप्त समाज के लोगों में जागरण की लहर चलाई और लोगों में स्वाधीनता की ललक जगाकर भारत की आजादी में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में भारतीय संस्कृति, भारतीय राजनीति और भारतीय समाज के विकास यात्रा की जानकारी मिलती है। राष्ट्रीय जागरण के जिस अनुभव को भारतीय समाज ने महसूस किया भारतेन्दु युग से वह प्रभाव भी साहित्य पर पड़ना शुरू हो गया। राष्ट्रीय चेतना में सामाजिक एकता, ऐतिहासिक गौरव, मानवीय मूल्य और अपनी संस्कृति के प्रति स्वाभिमान जैसे विषयों के समन्वित रूप शामिल होते हैं। हिन्दी साहित्य में यह चेतना साहित्य की अनेक विधाओं में दिखाई देती है। जिसमें कविता, कहानी, निबंध, नाटक व अन्य राष्ट्रवादी लेखों और चिंतनों में भी दिखाई देती है । राष्ट्रीय चेतना देश के नागरिकों में अपने देश के प्रति उत्तरदायित्व की भावना को प्रदीप्त करता है। जिसमें राष्ट्र के प्रति प्रेम, राष्ट्र के गौरव और अपना देश के प्रति कर्तव्य भी शामिल होता है ।

जब देश के नागरिक को स्वत्व का बोध हो जाता है, राष्ट्रीयता जागृत हो जाती है। यह चेतना भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के साथ साथ विकसित होती चली गई और दिनों-दिन बढ़ती रही।

1850 से आधुनिक युग और भारतेंदु युग प्रारंभ होता है। भारतेन्दु ने ही तत्कालीन अंग्रेजी शासन का विरोध कर राष्ट्रीय चेतना जागृत करने का प्रयास किया। भारतेन्दु की रचनाओं में स्वत्व को प्रमुखता दी गई। इसलिए भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को राष्ट्रीय चेतना का जनक कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। लोगों के अंदर राजभक्ति और राष्ट्रभक्ति के अंतर को समझने का भाव पैदा किया। भारतेन्दु जैसे अग्रणी कवियों ने समाज की यथास्थिति व दुर्दशा पर दुःख प्रकट किया। अतीत के गौरव गान के माध्यम से वर्तमान में पैदा हो रही हीन भावना को दूर किया। भारतेन्दु जी का ‘भारत दुर्दशा’ नाटक इसका जीवंत प्रमाण है।

1900 ई से द्विवेदी युग की शुरुआत और ‘सरस्वती पत्रिका’ के माध्यम से जन सामान्य में राष्ट्र के प्रति जागरण आंदोलन चला। इस युग के कवियों और लेखकों ने भारतीय इतिहास और संस्कृति को पुनर्जीवित

किया। 'भारत भारती' राष्ट्रीय चेतना का जीवंत प्रमाण है। इस युग के कवियों ने स्वदेशी अपनाओ को आंदोलन रूप में लिया, स्वयं भारत में बने वस्त्र खादी आदि को पहनकर लोगों को प्रेरित किया। भारतीय भाषाओं को अपनाने पर जोर देकर भारतीयता के मूल भाव इस युग में बने रहे, जिसके अंकुर भारतेन्दु युग में डाले गए थे।

इसके पश्चात् 1920 से 1936 तक छायावाद में भी सौंदर्यबोध के साथ-साथ सूर्यकांत त्रिपाठी निराला जैसे कवियों ने राष्ट्रीय चेतना का स्वर दिया। जयशंकर प्रसाद ने अपने नाटकों के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रवाद को तीव्रता से समाज के लोगों तक पहुंचाने का कार्य किया। माखनलाल चतुर्वेदी की कविता 'पुष्प की अभिलाषा' बलिदान की श्रेष्ठता को दिखाकर समाज का मुख उस ओर मोड़ने का प्रयास किया है ।

1936 से 1942 तक प्रगतिवाद में प्रेमचंद जैसे उपन्यास सम्राटों के रंगभूमि , कर्मभूमि जैसे साहित्य में यथार्थवाद के साथ राष्ट्रीय चेतना के स्वर सुनाई पड़ते हैं। स्वतंत्रता के समय तो साहित्य क्या संपूर्ण देश ही राष्ट्रीयता के रंग में रंगा हुआ दिखाई दिया। इस समय साहित्य में क्रांतिकारी, महापुरुषों का महिमामंडन, देशभक्ति गीतों को गाकर किया गया। रामधारी सिंह दिनकर जैसे श्रेष्ठ व राष्ट्रीय कवियों ने अपने चिंतन व लेखनी में राष्ट्रवाद को मुखरता दी। इसलिए '**राष्ट्रकवि**' भी कहा गया । '**हुंकार**' और '**रेणुका**' जैसी रचनाओं ने देश के युवाओं में जोश भर दिया। अब साहित्य में भावुकता का स्थान क्रांति संबंधी विचारों ने ले लिया।

स्वतंत्रता पश्चात् देश में फैली कुरीतियों को दूर करने के लिए, समाज को पुनः व्यवस्थित करने के लिए, राजनीति में सुधार व भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए संघर्षवादी स्वर दिखाई देता है, जिसमें राष्ट्र के विकास के लिए तड़प व ललक दिखाई दी। समकालीन साहित्य में भी राष्ट्र निर्माण के लिए देश में ही परस्पर संघर्ष व प्रयास दिखाई दिया। सबको न्याय, सबको समानता मिले, ताकि राष्ट्र मजबूत बन सके व राष्ट्रवाद की नयी व्याख्याएं सामने आईं। हिन्दी भाषा राष्ट्रीय एकता का माध्यम बनीं। इसलिए भारतेन्दु से लेकर निराला तक सभी साहित्यकारों ने राष्ट्र के प्रति चिंतन करते हुए सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक चेतना लाने का प्रयास किया। आधुनिक हिंदी साहित्य ने आम जन मानस को अपने अधिकारों के प्रति सचेत किया। दासता के अपमान का बदला लेने के लिए प्रेरित किया। हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा रूप प्रस्तावित करके क्षेत्रीयतावाद को तोड़ने का प्रयास किया। भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता से परिचित करवाकर भारतीय को पश्चिमी संस्कृति के अंधानुकरण करने से रोका। स्वतंत्रता के लिए बलिदान की आवश्यकता होती है, ऐसा लोगों में भाव भरने का कार्य किया।

इसलिए राष्ट्रीय चेतना का स्वर समय के साथ परिवर्तित होता गया किंतु साहित्य में राष्ट्र के प्रति चिंता भारतेन्दु युग से लेकर वर्तमान तक चल ही रही है। माध्यम व तरीके बदलते जा रहे हैं, किंतु देश व

समाज के विकास के लिए संघर्ष में निरंतरता बनी हुई है। समाज के प्रति कर्म बोध साहित्य ही करवाता है । इसलिए आज भी हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना प्रासंगिक है।

आधुनिक हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना

भारतेन्दु युग को आधुनिक हिंदी साहित्य का प्रवेश द्वार माना जाता है। यह वह काल जहां से मध्यकालीन जड़ता में जकड़ा हुआ भारतीय राष्ट्रीयता की ओर उन्मुख हुआ। इस युग ने लोगों को राजभक्ति से निकालने का काम किया। देश की आर्थिक विपन्नता, औपनिवेशिक शोषण के विरूद्ध साहित्यिक स्वर इस समय दिखाई देता है। भारतेन्दु युग के कवियों ने यह समझ लिया था कि भारत आर्थिक रूप से कमजोर इसलिए हुआ, क्योंकि भारत का धन विदेशों में जा रहा था। भारतेन्दु ने स्वयं इसके बारे में अपने नाटक भारत दुर्दशा में कहा है । वे कहते हैं कि

–"अंगरेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात, इहै बड़ि क्वारी।।[1]

इस प्रकार भारतीयों को अपनी आर्थिक कमजोरी का केवल कारण ही नहीं बताया, बल्कि स्वदेशी का आह्वान करके अपना धन अपने देश में रखने का प्रयास भी किया, जो आगे भविष्य में स्वतंत्रता आंदोलन का आधार बना। इस युग के साहित्यकारों के बारे में आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने भी कहा है कि उस समय के लेखक ,चिंतक , साहित्यकारों ने यह माना है कि राष्ट्र के उत्थान के लिए सामाजिक कुरीतियां समाप्त करनी पड़ेंगी। भारतेन्दुयुगीन बालकृष्ण भट्ट और प्रताप नारायण मिश्र ने देश की सबसे बड़ी सेवा समाज सुधार करने को माना। रामचंद्र तिवारी ने गद्य साहित्य की इतिहास वाली पुस्तक में कहा कि भारतेंदु के नाटकों में अतीत के गौरव और वर्तमान की दयनीय स्थिति पर क्षोभ प्रकट किया है। रामचंद्र तिवारी जी ने भारतेन्दु के नाटक की कुछ पंक्तियां उद्धृत करते हुए लिखते हैं

–"रोअहु सब मिली कै आवहु भारत भाई,
हा ! हा ! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।[2]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारतेंदु युग में राष्ट्रीय चेतना की नींव डाली गई,जो आगे के कालों में परिपक्व होकर फलीभूत हुई। भारतेन्दु ने जनता को राजभक्ति से निकालकर राष्ट्रभक्ति की ओर अग्रसर किया।

इसी प्रकार द्विवेदी युग में राष्ट्रीय चेतना को और अधिक मर्यादित व सुव्यवस्थित रूप दिया। इस युग के कवियों ने 'स्वदेश प्रेम' को प्रमुखता दी। भारतेन्दु युग में राष्ट्रवाद के साथ कहीं न कहीं राजभक्ति भी दिखाई देती है, किन्तु दि्वेदी युग देशभक्ति चरम पर पहुंचने लगी। भारतेन्दु युग की तरह इस युग के

कवियों ने भी देश की दुर्दशा से जनता को अवगत करवाया और औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध आक्रोश व अतीत का गौरवगान किया ।अतीत के गौरव गान संबंधी मैथिलीशरण गुप्त की ये पंक्तियां देखिए –

“हम क्या थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी ।

आओ विचारें आज मिलकर , ये समस्याएं सभी।।[3]

इन पंक्तियों में वर्तमान की हताशा से उभारने के लिए समाज के लोगों को गौरवशाली अतीत का स्मरण करवाया है। इस युग से प्रगतिवाद तक एक और राष्ट्रवादी, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में वैद्य गुरुदत्त जी भी हुए हैं। वैद्य गुरुदत्त जी अपनी संस्कृति की ओर लौटने की प्रेरणा देते हैं। वे मानते थे कि राष्ट्र को वास्तव में स्वतंत्र होने के लिए अपनी भाषा, अपनी चिकित्सा पद्धति और अपनी ही शिक्षा प्रणाली को अपनाना होगा। वे लिखते हैं –

“किसी भी राष्ट्र की स्वाधीनता का अर्थ केवल विदेशी शासकों का चले जाना नहीं है, अपितु उस राष्ट्र की अपनी आत्मा का पुनः प्रतिष्ठित होना है। विदेशी शिक्षा और विदेशी पद्धति से विकसित राष्ट्र केवल एक नकल बनकर रह जाता है।[4]

इसी प्रकार इस युग के कवि माखनलाल चतुर्वेदी ने एक पुष्प के माध्यम से राष्ट्र के प्रति समर्पण भाव को दिखाया गया है। पुष्प श्रृंगार आदि का माध्यम नहीं बल्कि देश के लिए बलिदान देने वाले वीर शहीदों के पांव के नीचे आने अभिलाषा प्रकट करता है।

कवि की ये पंक्तियां देखिए –“ मुझे तोड़ लेना बनमाली!

उस पथ पर देना तुम फेंक

मातृभूमि पर शीश चढ़ाने,

जिस पथ पर जावें वीर अनेक।[5]

इस प्रकार पुष्प की अभिलाषा कविता इस युग की चेतना का विस्तार है। इस कविता के माध्यम से कवि राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए बलिदान करने के भाव को प्रेषित करना चाहता है। इस युग में इसके अतिरिक्त समाज की कुरीतियों पर भी प्रहार किया है। स्वदेश और स्वदेशी को प्राथमिकता देना भी राष्ट्रीय चेतना ही है, जो युग के कवियों ने, लेखकों ने जनमानस से आग्रह किया है।

इसके बाद छायावादी विचारधारा का प्रारंभ होता है , जिसमें प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी को छायावाद के चार स्तंभ माना जाता है। इनकी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना सांस्कृतिक गौरव और आत्म सम्मान के रूप में प्रकट हुआ है। इन्होंने भी भारतीय अतीत की गौरवगाथा गाकर, वर्तमान गुलामी की जंजीरों को तोड़ने का आह्वान किया है। जयशंकर प्रसाद के नाटक – चंद्रगुप्त , स्कंदगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, अजातशत्रु आदि में ऐतिहासिक गौरवगाथा ही है, जो भारतीय के हृदय में वीरता का संचार करती है। चंद्रगुप्त नाटक में आए इस गीत की कुछ पंक्तियों को देखिए –“अरूण यह मधुमय देश हमारा,

जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।[6]

इसी प्रकार महाकवि निराला ने अपनी कविता 'राम की शक्तिपूजा' से यह संकेत किया है कि राष्ट्र को अपने विकास के लिए आंतरिक शक्ति को जागृत करना होगा। इसके अतिरिक्त छायावाद के साथ-साथ चल रही राष्ट्रीय काव्यधारा के कवियों ने राष्ट्रवाद को और अधिक मुखर रूप प्रदान किया। इन कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी और बालकृष्ण शर्मा नवीन का नाम प्रमुख रूप से लिया जा सकता है। बालकृष्ण शर्मा नवीन की 'विप्लव गायन' कविता की पंक्तियों को देखिए –

कवि ! कुछ ऐसी तान सुनाओ,
जिससे उथल-पुथल मच जाए,
एक हिलोर इधर से आए,
एक हिलोर उधर से आए।[67]

इस कविता के माध्यम से कवि ने विकास को अवरूद्ध करने वाली रूढ़ियों को तोड़ने की बात कही है। एक नया समाज निर्मित करने का आह्वान किया है।

इसी प्रकार हम प्रगतिवाद में राष्ट्रीय चेतना कि बात करें तो वहां आम समाज ही राष्ट्रवाद हो गया, क्योंकि यह विचारधारा मार्क्सवादी थी। इन्होंने सम्राज्यवाद का विरोध किया और पूंजीवाद का अंत करने के लिए संघर्ष किया। किसान और मजदूरों का स्वर इस युग की रचनाओं में विशेषकर केदारनाथ अग्रवाल और नागार्जुन की कविताओं में दिखाई देता है । नागार्जुन की कविता 'अकाल और उसके बाद' की ये पंक्तियां देखिए –"वतन बेचकर पंडित नेहरू बहुत सुखी हैं
इधर करोड़ भूखे नंगे बहुत दुखी हैं।[8]

नागार्जुन की कविताओं में व्यवस्था पर तीखा प्रहार मिलता है। इन पंक्तियों में राजनीति पर व्यंग्य करके समाज की दयनीय स्थिति का चित्रण कर रहे हैं। स्वतंत्र भारत में व्याप्त भ्रष्टाचार और सत्ता की निरंकुशता पर प्रहार किया है।

इसके विपरीत गहरे अर्थों में सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय अपनी वाणी को समाज हित में प्रकट करते हैं। इनकी कविताओं में बौद्धिकता, मनोवैज्ञानिक वर्णन से व्यक्ति की स्वतंत्रता की ओर संकेत किया है। इन पंक्तियों को देखिए

–"यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता, पर इनको भी पंक्ति दे दो।[9]

इन पंक्तियों में कवि ने प्रतीक रूप में वर्णन किया है। यहां 'दीप' को 'व्यक्ति' का और 'पंक्ति' को 'राष्ट्र' या 'समाज का प्रतीक माना है। व्यक्ति की स्वतंत्रता की बात भी करते हैं और व्यक्ति को राष्ट्र के लिए समर्पित भी करके कवि अपनी राष्ट्रीयता व्यक्त करता है। इसलिए इन दोनों कवियों के वर्णन से यह प्रतीत

होता है कि राष्ट्र का गौरव गाना मात्र करने से काम नहीं चलेगा बल्कि उसके अंदर की कमजोरियों, कमियों को उजागर करके राष्ट्र को मजबूत बनाया जा सकता है।

प्रयोगवाद के बाद नयी कविता और समकालीन साहित्य में भी राष्ट्रीय चेतना के स्वर आदर्शवाद के स्थान पर व्यवस्था के विरोध में दिखाई देने लगे थे। स्वतंत्रता के पश्चात् जैसे देश की कल्पना की गई थी, वैसा कुछ बदलाव दिखाई नहीं दिया। देश में गरीबी और भ्रष्टाचार बढ़ रहा था। साहित्यकारों का इस व्यवस्था के प्रति मोहभंग हुआ। इन साहितय में सुदामा पांडेय 'धूमिल' का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है।

धूमिल की एक कविता की कुछ पंक्तियां देखिए –"क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है, जिन्हें एक पहिया धोता है?"[10]

नयी कविता के समय ही दीनदयाल उपाध्याय जैसे राष्ट्रवादी लेखक, चिंतक और दार्शनिक हुए, जिन्होंने 'एकात्म मानववाद' के विचार को साहित्य में स्वयं प्रयोग किया और अन्य साहित्यकारों को प्रेरित किया। उनका मानना था कि भारत की पहचान भूगौलिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक रूप में निहित है। वे मानते थे कि व्यक्ति की तरह राष्ट्र का भी अपना एक स्वभाव होता है, जो राष्ट्र अपने मूल स्वभाव को छोड़कर दूसरों के स्वभाव को अपनाता है ,तो उसका निश्चित रूप से पतन होगा। राष्ट्र संबंधी उनके विचार देखिए –"राष्ट्र केवल जन- समूह नहीं है, बल्कि एक जीवित इकाई है। जब एक जन- समूह के पास एक लक्ष्य, एक आदर्श और एक ही संस्कृति होती है ,तब वह राष्ट्र बनता है।"[11]

समकालीन कविता के समय मुक्तिबोध की कविताओं में राष्ट्र की समस्याओं को एक भयानक दुस्वप्न के समान देखा गया । यहां राष्ट्रीय चेतना का अर्थ व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष और आत्म संघर्ष हो गया। साठोत्तरी कविता में कवियों ने लोकतंत्र की विसंगतियों पर कटाक्ष करते हुए रघुवीर सहाय जैसे कवियों ने कहा है-

"राष्ट्रगीत में भला कौन वह भारत भाग्य विधाता है,
फटास उठाना पहने जिसका गुण हर रचना गाता है।"[12]

इसी युग में नरेंद्र कोहली जैसे श्रेष्ठ कथाकार भी आते हैं, जिन्हें सांस्कृतिक पुनर्जागरण का अग्रदूत भी माना जाता है। कोहली ने रामायण और महाभारत के कथानक को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत करके राष्ट्र की सुप्त चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है। कोहली मानते हैं कि हम अपनी ऐतिहासिक भूलों से सीख लेकर संस्कृति की जड़ों से जुड़े रहना चाहिए। वे अपने उपन्यास '**दीक्षा**' में राम जैसे श्रेष्ठ चरित्र के माध्यम से यह समझाना चाहते हैं कि गलत का विरोध शक्ति के साथ करना होगा, मात्र प्रार्थना से काम नहीं चलेगा। वे अपने इस उपन्यास में श्रेष्ठ व आदर्श चरित्र और पात्र माध्यम से यह बात कहते हैं कि – "अन्याय का प्रतिकार न करना भी उतना ही बड़ा अपराध है, जितना अन्याय करना। राष्ट्र की अस्मिता

तभी सुरक्षित रहती है ,जब उसके नागरिक अपने सांस्कृतिक मूल्य के प्रति सचेत और स्वाभिमानी हो।[13]

प्रयोगवाद के बाद की राष्ट्रीय चेतना अंधानुकरण मात्र नहीं है, बल्कि एक जागरूक, स्पष्टवादी साहित्यकार की रचना है, यह राष्ट्र से प्रेम भी करती है और उसकी कमियों पर प्रहार करने में भी संकोच नहीं करती। इसी स्वतंत्रता के पश्चात् के युग में राष्ट्रीय कवि और राजनेता अटल बिहारी वाजपेयी जी का नाम आता है। इनकी रचनाओं में छायावाद की तरलता प्रगतिवाद का यथार्थ और एक प्रखर राष्ट्रवाद का संगम मिलता है। अटल जी ने भारत को केवल जमीन का एक टुकड़ा भर नहीं माना, बल्कि इस भूमि को **'जीवित राष्ट्रपुरुष'** माना है । उनके भाषण की कुछ पंक्तियों को देखिए –

"यह अर्पण की भूमि है, यह तर्पण की भूमि है। इसका कंकड़ कंकड़ शंकर है, इसका बिंदु बिंदु गंगाजल है।

हम जिएंगे तो इसके लिए, मरेंगे तो इसके लिए।[14]

राष्ट्र की रक्षा के लिए हम जो अर्पण करते हैं, उसको ही श्रेष्ठ व अपना धर्म स्वीकार किया है। इनकी कविता या वचन राष्ट्र की अखंडता व मानव मूल्यों की रक्षा करती है। साहित्य की दृष्टि से उन्हें राष्ट्रीय संस्कृत धारा का आधुनिक तरीके से विस्तार करने वाला माना जाता है।

अटल जी की कविताओं ने एक बार फिर से राष्ट्र को सामूहिक शक्ति का बोध कराया।

संदर्भ सूची

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र, भारत दुर्दशा ,साहित्य भवन संस्थान ,प्रयागराज, पृष्ठ संख्या- 12 ।
2. रामचंद्र तिवारी, हिंदी का गद्य साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ संख्या - 82 ।
3. मैथिलीशरण गुप्त, भारत भारती, साहित्य सदन, झांसी, पुनर्मुद्रण- 2010 ,पृष्ठ संख्या- 15 ।
4. वैद्य गुरुदत्त, स्वधर्म और राष्ट्र, हिंदी साहित्य सदन, नई दिल्ली, संस्करण- 1962, पृष्ठ संख्या – 24 ।
5. पंडित माखनलाल चतुर्वेदी, हम किरीटिनी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018 ,पृष्ठ संख्या – 42 ।
6. जयशंकर प्रसाद, चंद्रगुप्त (नाटक), भारतीय भंडार ,इलाहाबाद, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या – 88
7. बालकृष्ण शर्मा नवीन, कुमकुम (काव्य संग्रह), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण 2010 ,पृष्ठ संख्या- 58 ।
8. नागार्जुन ,प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016 ,पृष्ठ संख्या – 44 ।

9. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय , इत्यलम् , भारतीय ज्ञानपीठ , नई दिल्ली , संस्करण 2010, पृष्ठ संख्या – 92
10. सुदामा पांडेय धूमिल, संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या – 22 ।
11. डॉ महेश चंद्र शर्मा, दीनदयाल उपाध्याय : संपूर्ण वांग्मय, खंड -7 , प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 112 ।
12. रघुवीर सहाय, लोग भूल गए हैं, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2015, पृष्ठ संख्या- 48 ।
13. नरेंद्र कोहली, दीक्षा (राम कथा श्रृंखला उपन्यास), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2012, पृष्ठ संख्या- 114 ।
14. अटल बिहारी वाजपेई, संकल्प काल (भाषणों का संग्रह), प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या – 104 ।